ICSSR Sponsored

ISSN: 2319-9997

Journal of Nehru Gram Bharati University, 2024; Vol. 13 (2):88-95

महात्मा गांधी जी के दार्शनिक विचार

पूर्णेन्दू मिश्र एवं अरविन्द शुक्ला
दर्शनशास्त्र एवं योग विभाग
नेहरू ग्राम भारती (मानित विश्वविद्यालय)
जमुनीपुर कोटवा दुबावल प्रयागराज उ0प्र0

Received: 30.11.2024 *Revised: 20.12.2024* *Accepted: 25.12.2024*

सारांशः

यह शोध पत्र महात्मा गाँधी जी के जीवन दर्शन से आरम्भ होते हुए गाँधी जी ने युवाओं एवं आध्यात्मिक दृष्टिकोण पर प्रकाश डाला है। महात्मा गाँधी जी एक प्रमुख राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे । उनकी इस अवधारणा की नींव सम्पूर्ण अहिंसा के सिद्धान्त पर रखी गयी थी जिसने भारत को आजादी दिलाकर पूरी दुनिया में आम जनता के नागरिक अधिकारों एवं स्वतन्त्रता के प्रति आन्दोलन के लिए प्रेरित किया।

प्रस्तावना

मोहन दास करम चन्द गांधी का जन्म २ अक्टूबर 1869, निधन 30 जनवरी 1948 में हुआ। जिन्हें महात्मा गांधी के नाम से जाना जाता है, भारत एवं भारतीय स्वतंत्रता आन्दोलन के एक प्रमुख राजनैतिक एवं आध्यात्मिक नेता थे। वे सत्याग्रह (व्यापक सविनय अवज्ञा) के माध्यम से अत्याचार के प्रतिकार के अग्रणी नेता थे, उनकी इस अवधारणा की नींव सम्पूर्ण अंहिसा के सिद्धान्त पर रखी गयी थी, जिसने भारत को आजादी दिलाकर पूरी दुनिया में आम जनता के नागरिक अधिकारों एवं स्वतंत्रता के प्रति आन्दोलन के लिए प्रेरित किया। उन्हें पूरी दुनिया में आम जनता महात्मा गांधी के नाम से जानती है। गांधी जी की पहली बड़ी उपलब्धि 1918 में चम्पारन सत्याग्रह और खेड़ा सत्याग्रह में मिली हालांकि अपने निर्वाह के लिए जरूरी खाद्य फसलों की बजाए नील नकद पैसा देने वाली खाद्य फसलों की खेती वाले आन्दोलन भी महत्वपूर्ण रहे हैं। इसके अतिरिक्त असहयोग आन्दोलन 1920, सविनय अवज्ञा आन्दोलन 1930, व्यक्तिगत सत्याग्रह 1940, भारत छोड़ो आन्दोलन 1942 (प्रसिद्ध नारा "करो या मरो") महत्वपूर्ण आन्दोलन का नेतृत्व भी किया। गांधी जी एक सफल लेखक भी थे। कई दशकों तक वे अनेक पत्रों का संपादन कर चुके थे, जिसमें हरिजन, इंडियन ओपनिंग, यंग इंडिया अदि सम्मिलित है। जब वे भारत में वायस आए तो उन्होंने 'नवजीवन' नामक मासिक पत्रिका निकाली। बाद में नवजीवन

का प्रकाशन हिन्दी में भी हुआ। गांधी जी द्वारा मौलिक रूप से लिखित पुस्तक चार है – हिंद स्वराज, दक्षिण अफ्रीका के सत्याग्रह का इतिहास, सत्य के प्रयोग (आत्मकथा) तथा गीता पदार्थ कोष सहित संपूर्ण गीता की टीका।

सन् 1888 में उन्हें विधि के अध्ययन के लिए इंग्लैण्ड भेजा गया। तन तक उनके पिता की मृत्यु हो चुकी थी, किन्तु उन्होंने इंग्लैंड जाकर अध्ययन करने की अनुमति तब मिली जब उन्होने अपनी मां के समक्ष निष्ठापूर्वक शपथ ली कि वे विदेश में घुम्रपान आदि न करेगें तथा बुरी संगति मे न रहेगें। वस्तुतः यह शपथ उनके जीवन मे संकल्प शक्ति के प्रतीक के रूप में प्रतिष्ठित हुयी। जब वे 1891 में विधि के 'बेरिस्टर' बन कर भारत वापस आये, कुछ दिनों के बाद किसी व्यापारी के मुकदमे के सिलसिले में वे दक्षिण अफ्रीका गये, अफ्रीका वास उनके जीवन को महत्वपूर्ण मोड़ देने का उपकरण बन गया। वहाँ उन्होंने प्रेम से अशुभ पर विजय पाने वाले अपने रंगो का प्रयोग प्रारंग्भ कर दिया। उन्होंने वहीं अनैतिक एवं रंगभेद पर आकृष्ट नियमों के विरुद्ध अपने. शातिपूर्ण प्रतिवाद का प्रारम्भ कर दिया। उन्ही के प्रारंभिक प्रयोगों में उनके धार्मिक एवं नैतिक विचारों का उद्‌भव हुआ।

क्रिया विधिः

क्रिया विधिः यह शोध पत्रिका वर्णाआत्मक पद्धति पर आधारित है, जिनमें महात्मा गाँधी जी के विद्यार्थी जीवन से लेकर सत्याग्रह आन्दोलन के साथ ही साथ गाँधी जी ने आध्यात्मिकताओं पर भी विशेष रूप से बढ़ावा दिया है। जिनमें से वह श्रीमद्‌भगवतगीता के कर्म सिद्धान्त पर जोर देते हैं और यह बताते है कि मानव को अपने पूरे जीवन–काल में कर्म प्रधानता होनी चाहिए । गाँधी जी ने इस शोध पत्रिका में अहिंसा शब्द का भावात्मक तथा निषेधात्मक दोनों प्रकार के अर्थ प्रकाश में आता है। गाँधीजी के अनुसार इसका भावात्मक अर्थ अधिक मौलिक है, क्योंकि अहिंसा के मूल स्वरुप की व्यक्त करता है तथा एक दृष्टि से निषेधात्मक अर्थ को भी अपने में समाविष्ट रखता है।

1. डेटा संग्रहण – डेटा विष्ठिन्न अलग अलग पुस्तकों से एकवित कर प्रकाश डाला गया है।
2. विश्लेषणात्मक ढांचा – डेटा से उभरे प्रमुख पैटर्न और थीम की पहचान करने के लिए विषयगत विश्लेषण का उपयोग किया गया।विश्लेषण निम्नलिखित विषयो पर केन्द्रित था।
   - जीवन पर आधारित ।
   - चम्पारण सत्याग्रह आन्दोलन पर आधारित ।
   - सत्य एवं अहिंसा पर आधारित ।
   - गाँधी जी के युवाओ के विचार पर आधारित ।
   - गाँधी जी की आर्थिक दृष्टि सम्बन्धी विचार ।
   - आध्यात्मिक चिंतनद्य
3. सैद्धान्तिक ढ़ाचा–

   इनकी पहली बड़ी उपलब्धि 1918 में चम्पारन सत्याग्रह और खेड़ा सत्याग्रह में मिला हाँलांकि इसके अतिरिक्त असहयोग आन्दोलन 1920,

सविनय अवज्ञा आन्दोलन 1930 व्यक्तिगत सत्याग्रह 1940, भारत छोड़ो आन्दोलन 1942 प्रसिद्ध नारा (करो या मरो) महत्वपूर्ण आन्दोलन का नेतृत्व भी किया। जो कि इस शोध–पत्रिका के अन्तर्गत आता है। महात्मा गाँधी जी आस्तिक थे और ईश्वर की सत्ता में उनकी गहरी आस्था थी, गाँधी जी ने अंहिसा का अर्थ केवल दूसरे के प्रति का प्रयोग करना ही न था, इसका अर्थ मन और आत्मा को अपने विरोधी के प्रति घृणा और हेवेव से पूरी तरह शुद्ध करना भी था। और अन्तिम में गाँधीजी का लक्ष्य विश्व शान्ति था और इसके लिए वे सच्चे अर्थों में वसुधैव कुटुम्बकम' का पालन करने के लिए कटिबद्ध थे,। तथा साथ ही साथ में वे भगवद्गीता को अपने जीवन में महत्व देने के साथ ही साथ कर्म को भी प्रधानता देते हैं। इस शोध पत्रिका के अन्तर्गत में वे कर्म को भी प्रधानता देते हैं।

प्रलोभन से बचा–

जैसे– जैसे मैं जीवन के विषयों में गहरा विचार करता गया, वैसे वैसे बाहरी और भीतरी आचरण में परिवर्तन करने की आवश्यकता अनुभव होती गई। जिस गति से मैने रहन–सहन में तथा खर्च में परिवर्तन किया, उसी गति से अथवा और भी वेग से मैंने भोजन में फेर– फार करना आरम्भ किया। अन्नाहार – विषयक अंग्रेजी पुस्तकें मैने देखी। विलायत में ऐसे विचार रखने वालों की एक संस्था थी। उसकी ओर से एक साप्ताहिक पत्र निकलता था। मैं उसका ग्राहक बना और संस्था का सदस्य भी। थोड़े ही समय में मैं उसकी कार्यकारिणी में ले लिया गया। यहाँ मेरा उन लोगों से परिचय हुआ, जो अन्नाद्वारियों के स्तंभ माने जाते हैं। अब मैं अपने भोजन संबंधी प्रयोगों में पड़ा। घर से मंगाई हुई मिठाई और मसाले का व्यवहार बंद कर दिया। मन का झुकाव दूसरी तरफ हो गया। मसालों का शौक जाता रहा, चाय और कॉफी छोड़ दी और ज्यादातर मैं रोटी, कोको और उबली हुई सब्जी पर ही गुजरा करने लगा। मेरे इन प्रयोगों से मुझे यह अनुभव हुआ कि स्वाद की असली स्थान जीभ नहीं बल्कि मन है।

मैंने भिन्न–भिन्न धर्मों का परिचय प्राप्त करने का प्रयास किया। इस बीच दो थियोसोफिस्ट मित्रों से भेंट हुई। उन्होंने मुझे गीता पढ़ने की प्रेरणा दी। उन दिनों वे एडविन एर्नाल्ड – कृत गीता पढ़ने के लिए कहा। मैं शरमाया क्योकि मैने तो गीता संस्कृत में तो क्या, गुजराती में भी नहीं पढ़ी थी। यह बात झेपते हुए मुझे उनसे कहनी पड़ी, पर साथ ही यह भी कहा कि मैं आपके साथ पढ़ने के लिए तैयार हूँ। यूँ तो मेरा संस्कृत ज्ञान नहीं के बराबर है । दूसरे अध्याय के अंतिम श्लोकों का गहरा असर मेरे मन पर हुआ।

ध्यातो विषयान्पुसः संगस्तेपूपाजायते।
संगात्संजायते कामः कामात्क्रोधीभिजायते ।।
क्रोधात् भवति सम्मोहः सग्मीहात्मृति विक्रमः ।
स्मृतिभ्रंशाद् बुद्धिनाशो बुद्धिनाशात्प्रणश्यति द्यद्य

कानों में उनको ध्वनि दिन–रात गूंजा करती थी। तब मुझे ज्ञात हुआ कि भगवद्गीता तो अमूल्य ग्रंथ है। यह धारणा दिनों–दिन अधिक मजबूत होती गई और अब तो

तत्वज्ञान के लिए मैं उसे सर्वोत्तम ग्रन्थ मानता हूँ। निराशा के समय इस ग्रन्थ ने मेरी आपार सहायता की है।

इसी अर्से में एक अन्नाहारी – छात्रालय में मानचेस्टर के एक ईसाई सज्जन से मेरी भेंट हुई। उनकी प्रेरणा से मैंने बाइबिल पढ़ी, परन्तु ओल्ड टेस्टामेंट तो पढ़ ही नही सका। वह मुझे कुछ जँचा नहीं पर जब न्यू टेस्टामेंट शुरु किया, तब ईसा के गिरी–प्रवचन का मन पर बहुत जबरदस्त असर हुआ। उसने दिल में घर कर लिया। बुद्धि ने गीताजी के साथ उसकी तुलना की। जो तेरा कुरता मागें, उसे अंगरखा दे डाल । यह पढ़ कर मुझे अत्यंत आँनन्द हुआ। शाम्मल भट्ट का वह छप्पय भी मुझे याद आया, जो पीछे दिया है। हालांकि कि मैंने हिन्दू धर्म का मामूली परिचय प्राप्त किया धा, फिर भी खतरों और संकटो से बचाने के लिए यह पर्याप्त न था। विलायत के मेरे आखिरी वर्ष अर्थात 1890 में पोस्टस्मथ में अन्नाहारियो का एक सम्मेलन हुआ। उसमें मुझे तथा एक और भारतीय मित्र को निमंत्रण मिला था। हम दोनों एक बहन के यहाँ, जिनके बारे में स्वागत समिति को कुछ पता नहीं' था, ठहराये गए। वह एक बदनाम घर था। रात को सभा से हम घर लौटे। भोजन बाद ताश खेलने के बैठे। विलायत में भले घरो में गृहणी भी मेहमानो के साथ इस प्रकार ताश खेला करती हैं। ताश खेलते समय आम तौर पर लोग निर्दोष मजाक करते हैं। मैं नहीं जानता था कि मेरे साथी इसमें निपुण है। मुझे इस विनोद में रस आने लगा। धीरे–धीरे मैं भी उसमे शामिल हुआ। मजाक की वाणी से क्रिया में परिणत होने की नौबत आ गई। ताश एक ओर रखने का अवसर आ गया। पर मेरे साथी के हृदय में भगवान बैठे। वह बोले, "तुम और यह पाप ? यह तुम्हारा काम नही भागो यहाँ से।'' मैं जागा, लज्जित हुआ। हृदय में इस मित्र का उपकार माना, माता को प्रतिज्ञा याद आई। वहाँ से भागा । कांपता हुआ अपने कमरे में पहुंचा।

उस समय धर्म क्या है? ईश्वर क्या चीज है? वह हमारे अंदर किस तरह काम करता है? ये कहते बात नहीं जानता था। पर लौकिक अर्थ में मैंने यही समझा कि ईश्वर ने मुझे बचाया, और जीवन के विविध क्षेत्रों में मुझे ऐसा ही अनुभव हुआ। सच पूछिए तो मुझे यह कहते हुए बड़ा आनन्द आता है कि मुझे अनेक संकटों के अवसर पर ईश्वर ने बरबस बचा लिया है। जब चारों ओर से आशाएँ छोड़ देने की अवसर आ जाता है, हाथ–पैर ढीले पड़ने लगते हैं, जब कहीं न कहीं से अचानक सहायता आ पहुँचती है। स्तुति, उपासना, प्रार्थना ये अंधविश्वास नहीं बल्कि उतनी ही अथवा उनसे भी अधिक सच बातें हैं। जितना कि हम खाते हैं, पीते हैं, बैठते हैं, आदि सच है। बल्कि ये कहने में अत्युक्ति नहीं कि यह एकमात्र सत्य है, दूसरी सब बातें असत्य है मिध्या है।

गाँधी जी के सत्य एवं अहिसा संबधी मत–

गाँधी जी की समस्त विचारधारा दो केंद्रिय भाव– स्वोती से ही पनपी है। एक भाव है सत्य तथा दूसरा है अहिंसा। दोनों भाव को वे एक विशेष अर्थ में अभिन्न भी कहते हैं क्योंकि एक का विचार अनिवार्यतः दूसरे तक ले जाता है। उनकी स्वीकारोक्ति है कि सत्य की तलाश में उन्हें अहिंसा की विचार से प्राप्त हो गया। सत्य पर किये गये अपने प्रयोगो से आप से आप अहिंसा पर आ गये। गांधी जी ने सत्य एवं अहिंसा के आपसी सम्बन्ध स्पष्ट करते हैं उन्हें एक ही सिक्के के दो पक्ष

कहते हैं। उनके अनुसार इससे अधिक उपयुक्त उपमा एक ऐसे दोनो ओर से चिकने तथा एक जैसे दिखाई देने वाले धातु डिस्क की देते हैं, जिसमें यह कहना कठिन हो कि किस ओर सीधा है किस ओर उल्टा । पुनः वे अहिंसा को साधन कहते हैं तथा सत्य की साध्य । साध्य उद्देश्य होता है, लक्ष्य होता है अतः दूर होता है, किन्तु साधन इसलिए है कि वह हाथ में है. अपने पास है। अतः यदि उचित ढ़ग से साधन का उपयोग हो तो लक्ष्य तो प्राप्त होगा ही। गांधीजी के प्रयोग में अहिंसा शब्द का भावात्मक तथा निषेधात्मक दोनों प्रकार का अर्थ प्रकाश में आता है। गांधी जी के अनुसार इसका भावात्मक अर्थ अधिक मौलिक है, क्योंकि यह अंहिसा के मूल स्वरूप को व्यक्त करता है, तथा एक दृष्टि से निषेधात्मक अर्थ को भी अपने में समाविष्ट रखता है।

गाँधी जी आस्तिक थे और ईश्वर की सत्ता में उनकी गहरी आस्था थी। उनके लिए ईश्वर ही दूसरा नाम सत्य था और अहिंसा सत्य का दूसरा पहलू थी। यानी ईश्वर, सत्य और अहिंसा उनके लिए एकाकार हो गए थे। अहिंसा का अर्थ केवल दूसरो के प्रति हिंसा का प्रयोग न करना ही नहीं था, इसका अर्थ मन और आत्मा को अपने विरोधी के प्रति घृणा और द्वेष से पूरी तरह शुद्ध करना भी था। यदि मन, वचन और कर्म में एकरुपता न हुई और किसी एक में भी द्वेष या घृणा बची रह गयी, तो उसे अहिंसा नहीं कहा जा सकता। राजनीति के क्षेत्र में इस अनूठे जीवन–दर्शन का कारगर इस्तेमाल करना और वृहत्तर भारतीय जनमानस में प्रतिष्ठित करके उसे सत्याग्रह के रुप में विदेशी शासन के विरोध का हथियार बनाना, गांधी की ऐसी उपलब्धियाँ हैं जिन्हें सदियो तक याद रखा जाएगा। यह अकारण नहीं चाहे मार्टिन लूथर हो या नेल्सन मंडेला या फिर शेख मुजीबुर्रहमान सभी ने उनसे प्रेरणा ग्रहण की। बांग्लादेश की प्रधानमंत्री शेख हसीना का कहना है कि पाकिस्तानी शासन के विरोध के लिए उनके पिता शेख मुजीबुर्रहमान ने गाँधी के जीवन से प्रेरणा ली थी । दक्षिण कोरिया के राष्ट्रपति ने गाँधी के जीवन मूल्यों को संयुक्त राष्ट्र की आधारशिला बताया है और उनका गहरा विश्वास था कि जब तक नागरिकों की आत्मशुद्धि नहीं होगी लोकतंत्र अपने सही अर्थों में स्थापित नहीं हो सकता।

गांधी जी के युवाओं के प्रतिविचार–

गाँधी जी हमेशा युवाओं को सही दिशा देने की बात करते थे। आदोलन के समय के युवाओं को हमेशा सतर्क करते रहते थे। सविनय अवज्ञा आंदोलन के समय उन्होनें कहा था हमारा आदोलन हिंसा का अग्रदूत न बन जाए इसके लिए मैं हर दंड सहने के लिए तैयार हूँ। यहाँ तक कि मैं मृत्यु का वरण करने को भी तैयार हूँ। उस समय के युवाओं से उनकी अपेक्षा थी कि वे अपनी ऊर्जा और उत्साह को स्वतंत्रता प्राप्ति में सार्थक योगदान दी गई की ओर मोड़े। उन्होंने हमेशा युवाओं को आत्मप्रशंसा से बचने को कहा है। उनका कथन है कि जनता की विचारहीन प्रशंसा हमें अंहकार की बीमारी से ग्रसित कर देती है। गांधीजी युवाओं को सामाजिक परिवर्तन का सबसे बड़ा औजार मानते थे। वे हमेशा चाहते थे कि सामाजिक परिवर्तनों, सामाजिक कुरीतियों, सती प्रथा, बाल–विवाह, अस्पृश्यता जाति व्यवस्था के उन्मूलन के विरुद्ध युवा आवाज उठाएँ। उनका मानना था कि शोषण मुक्त, स्वावलम्बी एवं परस्परपोषक समान के निर्माण में युवाओं की अहम भूमिका है एवं भविष्य में भी होगी। वर्तमान युवा प्रजातांत्रिक मूल्यों एवं तध्यपरक सिद्धान्तों को मानता है।

गाँधी जी की आर्थिक दृष्टि सम्बन्धी विचार

गाँधी जी के आर्थिक दर्शन के मूल मंत्र थे– अपनी जरूरत के मुताबिक उत्पादन करना, आवश्यकता से अधिक संग्रह न करना, लोभ न करना, यदि आप के पास अधिक धन संपत्ति है तो यह समझना कि परमात्मा द्वारा प्रदत्त दौलत के आप मालिक नहीं है, अपितु एक ट्रस्टी हैं। और परमात्मा की इस दौलत का जनकल्याण के लिए अधिकतम उपयोग करने की जिम्मेदारी आप पर है। गाँधी जी ने हमेशा पूँजीवादी व समाजवादी विचारधारा का विरोध किया है उनका मानना था कि देश की अर्थव्यवस्था कुछ पूँजीपतियों के पास गिरवी नहीं होनी चाहिए। उनकी अर्थव्यवस्था के केन्द्र बिन्दु गाँव थे। उनके अनुसार जब तक गाँव के युवाओं के गांव में' ही रोजगार नहीं मिलता है, तब तक उनमें अंसतोष एवं विज्ञीभ रहेगा। ग्रामीण बेरोजगारों का शहर की ओर पलायन, जो कि भारत की ज्वलंत समस्या है, का निराकरण सिर्फ कुटीर उद्योग लगाकर ही किया जा सकता है। गाँधी जी लिखते हैं– मेरी राय में भारत की न सिर्फ भारत की बल्कि, सारी दुनिया की अर्थ रचना ऐसी होनी चाहिए कि किसी की भी अन्न, और वस्त्र के अभाव की तकलीफ ना सहनी पड़े दूसरे शब्दों में हर एक को इतना आदर्श निरपवाद रुप से तभी कार्यान्वित किया जा सकता हैं जब जीवन की प्राथमिक आवश्यकताओं के उत्पादन के साधन जनता के नियंत्रण में रहे।

शांति की अवधारणा–

महात्मा गाँधी का लक्ष्य विश्व शान्ति था और इसके लिए वे सच्चे अर्थों में– ''वसुधैव कुटुनंकम्'' का पालन करने के लिए कटिबद्ध थे। सब 1924 के आरंग्भ में, जब वे भारतीय राष्ट्रवाद के प्रबल प्रवक्ता के रूप में दुनिया भर में ख्याति प्राप्त कर चुके थे, गाँधी ने बेलगाँव में सम्पन्न काग्रेस के अधिवेशन में कहा था कि आज के बेहतर विचारक एक–दूसरे के सदा युद्धरत पूर्णतः संप्रभु राष्ट्र नहीं बल्कि स्वाधीन और मित्र राष्ट्रो के एक संघ की स्थापना चाहते हैं। सन् 1930 के जब यूरोप और एशिया में फासिज्म जोर पकड़ रहा था, गाँधी ने हमलावार देशों पर कब्जा जमाकर उनके संसाधनों का शोषण करने के लिए छेड़े जाते हैं और उनके मूल में राष्ट्रों का अनियंत्रित लोभ और लिप्सा होती है, इसलिए गाँधी राष्ट्रवाद को मानवता के उपर रखने के विरुद्ध थे। गाँधी जी का मानना था, कि समाज में शांति की स्थापना तभी संभव है, जन व्यक्ति भावात्मक समानता एवं आत्मसंतोष को प्राप्त कर लेगा। गाँधी जी के अनुसार शांति की प्राप्ति प्रत्येक युवा का भावानात्मक एवं क्रियात्मक लक्ष्य होना चाहिए तभी उसकी उर्जा, गतिशीलता एवं उत्साह राष्ट्रीय हित में समर्पित होगें।

कर्मयोग –

कर्मयोग ही वह योग है जिसके माध्यम से हम अपनी जीवात्मा से जुड़ पाते हैं। 'भारतीय दर्शन में कर्म, बंधन का कारण माना गया है। किंतु कर्मयोग में कर्म के उस स्वरूप का निरुपण किया गया है जो बंधन का कारण नहीं होता । योग का अर्थ है समत्व की प्राप्ति (समत्वं योग उच्ययते)। सिद्धि और असिद्धि सफलता और विफलता में समभाव रखना समत्व कहलाता है। योग का एक अन्य अर्थ भी है वह कर्मो का कुशलता से संपादन करना है। इस प्रकार इसका अर्थ–

(योग कर्मसु कौशलम) कर्म करना कि वह बंधन को न उत्पन्न कर सके। कर्मशब्द संस्कृत के 'कृ' धातु से बना है, जिसका अर्थ 'करना' होता है । इस तरह कर्मयोग से अर्थ उस योग से लिया जाता है जिसमे कर्म करते हुए ईश्वर प्राप्ति के प्रयास किए जाते हैं। कर्म सिद्धान्त का यह सामान्य नियम है हम जैसा कर्म करते हैं वैसा ही फल पाते हैं।

गीता के अनुसार कर्म–

श्रीमद्भगवतगीता में तीन प्रकार के कर्मों की चर्चा की गयी है

1. कर्म, अकर्म, विकर्म
2. आसक्त कर्म एवं अनासक्त कर्म
3. निष्काम कर्म
4. नित्य, नैमित्तिक एवं काम्य कर्म

गीता के अनुसार कर्मों से सन्यास लेने अथवा उनका परित्याग की अपेक्षा कर्मयोग अधिक श्रेयस्कर है। कर्मों का केवल परित्याग कर देने से मनुष्य सिद्धि अथवा परमपद नहीं प्राप्त करता है। कर्म योग से हमारे आत्मज्ञान को जागृत करता है। इसके बाद हम न केवल अपने वर्तमान जीवन के उद्देश्यों को बल्कि जीवन के बाद की अपनी गति का पूर्वाभास प्राप्त कर सकते हैं। इसलिए श्रीमद्भगवगीता में कर्मयोग को सर्वश्रेष्ठ माना गया है। कर्म करना मनुष्य के लिए अनिवार्य है। उसके बिना शरीर का निर्वाह भी संभव नहीं है। भगवान श्री कृष्ण स्वंय कहते हैं कि तीनो लोकों में उनका कोई भी कर्तव्य नहीं है। उन्हें कोई भी अप्राप्त वस्तु प्राप्त करनी नहीं रहती फिर भी वे कर्म में संलग्न रहते हैं। यदि वे कर्म न करें ती मनुष्य भी उनके चलाए हुए मार्ग का अनुसरण करने से निष्क्रिय हो जाएगें।

एक सत्य यह भी है कि दुःख की उत्पत्ति कर्म से ही होती है। सारे दुःख और कष्ट आसक्ति से उत्पन्न हुआ करते हैं। कोई व्यक्ति कर्म करना चाहता है। वह किसी मनुष्य की भलाई करना चाहता है और इस बात का भी प्रबल संभावना है कि उपकृत मनुष्य कृतघ्न निकलेगा और भलाई करने वाले के विरुद्ध कार्य करेगा। इस प्रकार सुकृत्य भी दुख देता है। फल यह होता है कि इस प्रकार की घटना मनुष्य को कर्म से दूर भगाती है। यह दुख या कष्ट का भय कर्म और शक्ति का बड़ा भाग नष्ट कर देता है।

निष्काम कर्म योग–

कर्मण्ये वाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचनद्य
मा कर्मफल हेतुर्भू मो सङ्गोडस्वकर्मणि ।। 2/47 श्लोक

अर्थात ''तुम्हारा कर्म करने में ही अधिकार है, उसके फलों की में नहीं, तुम कर्मफल के कारण भी मत बनो तथा कर्मों को न करने की भावना के मत रहो। कर्मयोग सिरवाता है कि कर्म करो के लिए कर्म करो, आसक्ति होकर कर्म न करो। कर्मयोगी इसीलिए कर्म करता है कि कर्म करना उसे अच्छा लगता है और इसके पर उसका कोई हेतु नहीं है। कर्मयोगी कर्म का त्याग नहीं करता वह केवल कर्मफल का त्याग करता है। निष्काम कर्म का अर्थ कर्म का अभाव नहीं होता है। हम कर्म शून्य हो ही नहीं सकते हैं। किसी न किसी रूप में हम सभी सदा नैमित्तिक, काम्य

एवं निसिद्ध कार्य करते ही हैं। इस तरह कर्मों के बंधन से मुक्त होने के लिए आसक्ति छोड़कर उन्हें करना आवश्यक होता जाता है यही निष्काम कर्म है।

भगवान श्री कृष्ण निष्काम कर्म योग के सम्बन्ध में कहते हैं, तस्माद्सक्तः सततं कार्य कर्म समान्चर।

असक्तो ह्याचर–कर्म परमाझीतिः पुरुषः ।। (3ध19 श्लोक)

अर्थात् हे अर्जुन। तब तू भी आसक्ति छोड़कर अपना कर्म सदैव किया कर, क्योंकि आसक्ति छोड़कर कर्म करने वाले मनुष्य को परमगति प्राप्त होती है। इस प्रकार कर्म फल की इच्छा ने ररखकर कर्म करना निष्काम कर्म है।

श्रीमद्भगवतगीता के अनुसार, वास्तविक रूप से कर्मयोगी के बारे में वर्णन है

ब्रह्मण्याध्यय कर्माणि संङ्ग त्यकत्वा करोति यः।

लिप्यते न स पापेन पद्मपत्तमिवाम्भसा ।। (5ध10 श्लोक)

कर्मयोगी सभी कर्म–फलों को परमात्मा को समर्पित करके निष्काम भाव से कार्य करता है, तो उसको पाप कर्म कभी स्पर्श नहीं कर पाते हैं, जिस प्रकार कमल का पत्ता जल को स्वरी नही कर पाता है।

श्रीमद्भगवदगीता को महात्मा गाँधी 341 'जी ने ''जगत्यमाता'' भी कहा है,

सन्दर्भ ग्रन्थ सूची

1. लाल, बी के (२००२) समकालीन भा भारतीय दर्शन नईदिल्ली मोतीलाला बनारसी दास १०115

2. मोहन दास कारमचन्द्र गांधी सत्य के प्रयोग (आत्मक्या), तुलसी साहित्य पविल्के इम, ५० 36 वही पृष्ठ 37 वही पृष्ठ – 38 भारतीय दर्शन

3 Sharma C-D (2013), ई दिल्ली, मोतीलाल बनारसी दास 2015

4. गीताप्रेस गोरखपुर 2012 श्रीमद्भगवतगीता 19वाँ श्लोक 3 अध्याय पृ.52

5. ूहववहसमै मंतबी

Disclaimer/Publisher's Note:

The statements, opinions and data contained in all publications are solely those of the individual author(s) and contributor(s) and not of JNGBU and/or the editor(s). JNGBU and/or the editor(s) disclaim responsibility for any injury to people or property resulting from any ideas, methods, instructions or products referred to in the content.